पद्मावत में प्रकृति प्रेम

डॉ. वसुंधरा मिश्र

मानव और प्रकृति का संबंध अनादि काल से चला आ रहा है। मनुष्य को मनुष्य बनाने का बहुत बड़ा श्रेय प्रकृति को है। मलिक मुहम्मद जायसी को आचार्य रामचंद शुक्ल ने एकेश्वरवादी नहीं, अद्वैत वादी माना है। एकेश्वरवाद और अद्वैत वाद के बीच अंतर है। एकेश्वरावाद स्थूल एक देववाद और अद्वैत वाद आत्म वाद या ब्रह्म वाद। इसलिए वे सूफियों को अद्वैत वाद के करीब मानते है, सूफी प्रेम की पीर की अभिव्यंजना करते हैं। यह समाज के समन्वय का एक महत्वपूर्ण कदम है। सूफियों ने दिखा दिया कि एक ही प्रेम का तार सबके हृदय से होकर गुजरता हैं जो सभी आडबरों को नकारते है।

''छार उठाई लीन्ह एक मूँठी,
दीन्ह उड़ाई पिरिथमी झूठी''

जायसी की प्रेम भावना मृत्यु पर विजय पाने वाला प्रेम है। वे सौंदर्य, संयोग, वियोग, सामाजिक दायित्वों के निर्वहन में और मृत्यु बोध सभी में प्रेम देखते है। यह प्रेम धर्म, जाति, मठ - मजार से ऊपर है, पर वह इसी लोक के रीति रिवाजो, जातीय संस्कारों और घरलू जीवन में है।

मध्य कालीन सूफी काव्य परंपरा के शीर्ष कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने 'पद्मावत' महाकाव्य में प्रकृति -चित्रण किया है। इन्होने प्रकृति के अनेक रूपों का बड़े बड़े ही मनोहारी रूप से वर्णन किया।

आलंकारिक रूप में प्रकृति का वंन -

कवि जायसी ने पद्मावत में प्रकृति के अनेक उपमानो का प्रयोग करते हुए अलंकार रूप में प्रकृति का अंकन किया हैं। पद्मावती केरूप का चित्रण करते समय वे प्राकृतिक उपमानों का सहारा लेते हैं।

''कोई सिंगार, हार तेहि पाहॉ।
कोई सेवती, कदम की छाहॉ।।

कोइ चंदन फूलहि, जनु फूली।
कोई अजान बीरो तर भूली।।''

उद्दीपन रूप में प्रकृति

मानव के सुख -दुख का उद्दीपन रूप में प्रकृति का चित्रण, निरूपण करती है।

राजा रतनसेन और पद्मावती को संयोग काल में प्रकृति सुखद लगती है। चमकती हुई बिजली सोने की चमक जैसी प्रतीत होती है और दादुर एलं मोर के शब्द सुहावने लगते है.....

''रितु पापस बरसै पिउ पावा।
सावन - भादौ अधिक सोहावा।
पद्मावति चाहत रितु पाइ ।
गगन सोहावन, भूमि सोहाई।
कोकिल वैन, पात बग घूटी।
धनि निसरी जनु बीर बहूटी।।
चमक बीज, बरसै जल सोना।
दादुर, मोर सबह सुनि लोना।।''

कभी वियोग कालीन समय में प्रकृति नागफनी के समान अत्यंत भयकारक एवं दुख प्रतीत होती है।

''खड़ना बीजू चमकें चहुँ ओरा।
बुंद बान बरिसहिं घन घोरा।।
दादुर मोर कोकिला पीऊ।
गिरे बीजु घट रहे न जीऊ।

वहीं दूसरी ओर नागमती का रससिक्त हृदय सूख जाता है, वह बेहोश हो जाती हैं। फिर होश आने पर वह कहती है कि -

प्रियतम के विरह मे किसने और क्यों मेरे प्राणो को उडने से रोका है। अब मेरी जैसी चातकी की आत्मा को प्रिय रूपो मेघ से कौन मिलन करवायेगा।

विरहिणी नागमती ने जब आह भरी तो आह के साथ आग भी निकलने लगी जिससे नागमती का हंस अर्थात हृदय जलने लगा। ग्रीष्म ऋतु के दग्ध वृक्षों को वसंत जिस तरह संभाल लेती है फिर उसमें नई कोंपलें निकलने लगती हैं, वैसे ही वियोग के दिन भी बीत

जायेगें, नागमती की सखियाँ उसको आश्वासन देती है।

आषाढ़ का माह आने के बाद नागमती का विरह और बढ़ जाता है। आषाढ़ में बादलों की गर्जना सुनकर ऐसा लगता है मानो विरह ने युद्ध की तैयारी कर ली है और विरह सेना के लिए कूच का नगाड़ा बजा दिया है -

''चढ़ा आषाढ़, गगन घन गाजा।
साजा विरह दुंद दल बाजा''
वह कहती है ...
''सावन बरस मेह अति पानी।
भरनि परी, हौं विरह झुरानी''

वह पति रतनसेन के साथ नहीं है, उसके पति के बीच अनेक अगम्य पर्वत, समुद्र तथा बीहड़ वन एवं ढाक के सघन वन हैं।

इसी तरह भादौ मास में प्रकृति का कितना सजीव चित्र-

''भा भादों दूभर अति भारी।
कैसे भरौं रैनि अँधिकारी।।''

माघ नक्षत्र में बरसात हो रही है और उसके बाद पूर्वा फाल्गुनी लग गया और धरती जल से भर गयी है।

ऐसे में विरहणी का शरीर उसी तरह सूख गया जैसे वर्षा ऋतु में आक और जवास के पौधे बिना पत्तों के होकर सूख जाते हैं।

''लागा कुवार, नीर श्रग घटा।

☆☆ ☆☆ ☆☆
स्वाति बूंद चातक मुख परे।
समुद्र सीप मोती सब भरे।।''

फिर कार्तिक मास में शरद के चंद्रमा का उजाला जहां सबको शीतलता प्रदान करता है, वहीं नागमती के लिए वह राहु के समान है। विभिन्न त्योहार हैं और अगहन मास में दिन छोटे हो जाते हैं।

प्रकृति के माध्यम से कवि ने जीवन के वास्तविक रूप का चित्रण किया है। षट-ऋतु वर्न खंड में कवि ने छः ऋतुओं के उदयास्त का सौंदर्य - वर्णन बड़े ही सूक्ष्म एवं मनोहारी रूप में

किया हैं तो पात्रों की मानसिक स्थिति को भी उजागर किया है। प्रथम वसंत ऋतु को कवि ने ''नवल ऋतु'' कहा, पावस ऋतु के लिए ''रितु ग्रीष्म कै तपनि न तहाँ, जेठ-आषाण कंत घर जहां'' आदि प्रकृति के अत्यधिक आकर्षक और प्रभावोत्पादक अभिव्यंजना है।

प्रतीकात्मक रूप में -

कवि ने सिंहलगढ़ का वर्णन करते हुए कहा है ''तौं पौरी पर दुसवं दुआरा'' अर्थात मानव शरीर के नौ चक्र हैं और दसवां दरवाजा ब्रह्म रंध्र है, मोती चुर का कुंद हृदय जिसमें प्रेम रूपी अमृत और विरह रूपी कपूर भरा हुआ है।

रहस्यात्मक रूप में प्रकृति -

जायसी अज्ञात सत्ता को प्रतिबिम्बत तेखत है। कवि ने पद्मावती (रूपी परमात्मा) के सौंदर्य एवं तेज को प्रकृति में व्याप्त दिखाकर रहस्यात्मक रूप में प्रकृति -चित्रण किया है। यथा -

''नयन जो देखा कंवल भा निरमल नीर शरीर।''

आलंबनात्मक वर्णन -

कवि जायसी ने पद्मावत में एकऔर जहाँ बिम्बो के द्वारा प्रकृति के रम्य एवं भयानक रूपों का चित्रण किया है तो दूसरी ओर परिगणन शैली का प्रयोग कर प्रकृति की छटा चित्रित किया है। मानसरोवर खंड में कवि ने उसके निर्मल जल, सुंदर घाट, मनोहर एवं उसमें खिले हुए कमलों की शोभा वर्णित की है -

''मान सरोदक बरनौं काहा । भरा समुद्र अस अति अवगाहा।
पानी मोती अस निरमल तासू। अमृत आनि कपूर सुवासु।
फुला कंवल रहा होइ राता । सहस-सहस पखुरिन कर छाता।।''

प्रकति का मानवी करण-

मानसरोवर का मानवीकरण मिलता है। पद्मावती रूपी परमात्मा है जिसके चरणों का स्पर्श करके वह निर्मल हो जाता है। यथा -

''कहा मानसर चहा सो पाई। पारस रूप इहा लगी आई।।''

पद्मावती के सौंदर्य का वर्णन करते हुए कहा है कि ''बरनैं माँग सीस उपहारी, सेंदुर अबहि चढ़ा जोहि नाही।''

अनेक स्थलों में समासोक्ति के प्रयोग, प्रकृति उपादानो के अवलंबन लेकर अप्रस्तुत का संकेत दिया है।

''जेठ जरें, जग चलै लुभारा।
उटहि बवंडर, परहि अंगारा।।
चारिहु पवन झकोरे आगी।
लंका दाहू, पलंका लगी।।''

''पद्मावती तो प्रकृति वर्णन का अगाध सागर है जिसकी गोद में अनंत धनराशि है। इस प्रकार मलिक मुहम्मद जायसी ने अपने काव्य में प्रकृति के अनेक रूपों में, अनेक प्रकार से वर्णन किया है जो आज भी जीवन और समाज के सांथ-सांथ प्रकृति के साथ धुल-मिला है।

सदर्भ ग्रंथ -

पद्मावत, मलिक मोहम्मद जायसी,